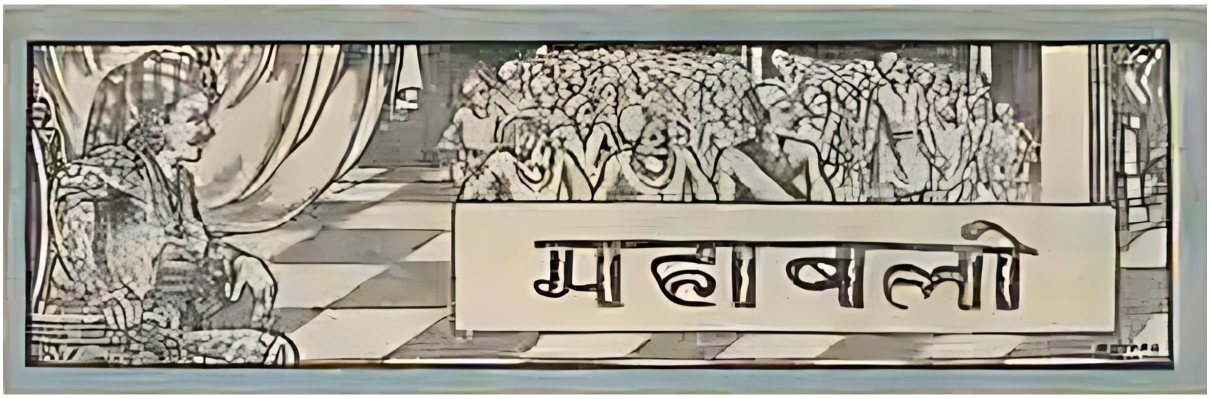
चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र





सैकड़ों साल पहले की बात है। किसी नगर मैं एक राजा था। एक दिन वह भरे दरबार में अपने मन्त्रियों और सर्दारों के साथ बैठा हुआ था। एक चोबदार ने आकर उससे कहा-"महाराज! महावल नाम का एक आदमी श्रीमान के दर्शन करना चाहता है। उसे अन्दर आने दूँ?"

राजा ने मञ्जूरी दे दी। चोबदार "जैसी आज्ञा !" कह कर चला गया।

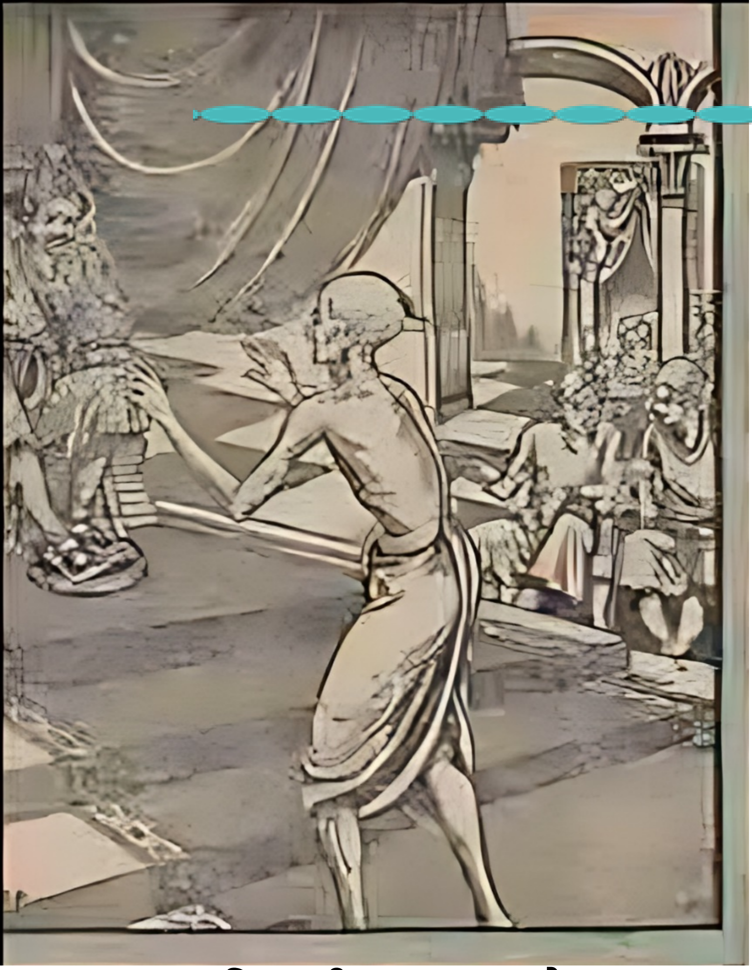
दरबारियों की नजर दरवाजे की ओर घूम गई। महाबल का नाम सुन कर लोगों के मन में हुआ कि कोई लम्बा-तगड़ा, लोहे से पुट्टों वाला पहलवान चौड़ी छाती, कड़ी मूँछ और हाथी की सूड-से हाथ-पाँव लिए अकड़ता हुआ अन्दर आने वाला है। लेकिन जब उन्होंने देखा कि एक दुबला-पतला, काँटे की तरह सूखा हुआ आदमी झुकी हुई कमर और पिचका हुआ चेहरा लिए चोबदार के पीछे-पीछे काँपता हुआ आ रहा है तब उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। सामने आकर उसने राजा को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और 'जयी भव। दिग्विजयी भव !" कह कर आशीर्वाद देने लगा।

उसे देख कर राजा को बड़ी घृणा हुई और उसने सोचा- "नाम बड़े और दर्शन थोड़े।" उसने क्षोभ से पूछा-"क्यों जी! तुम तो हवा के झोंके से गिर जाने वाले हो। तुमने अपना नाम महाबल क्यों रखा ?"

"महाराज ! वह मेरा अपना रखा हुआ नहीं है। मेरे चेले-चाटी मुझे इसी नाम से पुकारते हैं।" उस आदमी ने जवाब दिया।

"क्या कहते हो ! तुम्हारे चेले-चाटी भी हैं। क्या वे भी तुम्हारे जैसे ही बलवान हैं?" राजा ने व्यङ्ग से पूछा।

"महाराज ! मालूम होता है कि श्रीमान को मेरे बारे में कोई जानकारी नहीं है। तो



सुनिए श्रीमान। राक्षसों का राजा रावण, जिसने दोनों हाथों से कैलास पहाड़ उठा लिया था, मेरा एक चेला था। वानर-राज बाली जिसने उस रावण को अपनी कोख में दबा कर सात सागर का जल पिलाया था, यह भी मेरा चेला था। इन दोनों के अलावा वाली का भाई सुग्रीब, उसका मन्त्री हनुमान, उसका गुरु जाम्बवान सभी मेरे चले थे।" उस आदमी ने कहा।

"तो तुम त्रेता युग के आदमी हो ?" राजा ने पूछा।

"त्रेता ही नहीं, मैंने द्वापर भी देखा है, राजन् ! नहीं तो विश्व-जयी जरासन्ध, कीचक, बकासुर हिडिम्बासुर, दुर्योधन और उसके जानी दुश्मन भीम, इन सबको मुझसे शिक्षा पाने का सौभाग्य कैसे पास होता?" उसने कहा।

"ये सब तो मिट्टी में मिल गए। एक तुम्हीं अब तक कैसे जीते रहे ?" राजा ने कुतूहल से पूछा।

"इसमें क्या आये है! महाराज ! मैं भी हनुमान और जाम्बवान की तरह चिरञ्जीबी हूँ। लेकिन आजकल तो पेट भर खाना ही नहीं मिलता। इसीलिए सुख कर काँटा हो गया हूँ। ऐसा हो गया हूँ कि लोग अब मुझे पहचान भी नहीं पाते हैं। इस तरह की जिन्दगी से क्या फायदा ?" महाबल ने जवाब दिया।

"अच्छा! तुम मेरे पास क्यों आए हो?" राजा ने पूछा।

आप मुझे अपना दरबारी बना लीजिए। पेट भर खाना दीजिए। जब में कुछ दिन बाद पहले की तरह बलवान हो जाऊँगा तो आप जो काम दीजिएगा पूरा करूँगा। फिर कहिएगा तो पहाड़ भी ढोने लगूँगा।" उसने कहा ।

राजा ने सोचा-"देखें, इसकी बातें कहाँ तक सच्ची हैं।" इसके अलावा उस शहर की बगल में ही एक पहाड़ थी, जिसके कारण शहर वालों को आने-जाने में बड़ी मुश्किल होती थी। राजा ने सोचा कि इस विचित्र पहलवान को कुछ दिन तक भरपेट भोजन देकर हृष्ट-पृष्ट बनाने के बाद इस से वह पहाड़ ढोकर कहीं फेंक आने को कह देंगे। इस तरह शहर बालों को बड़ी सुविधा होगी। यह सोच कर उसने मन्त्री से कहा-"इस को रोज मन चाही चीजें खिलाने का इन्तजाम कीजिए।" मन्त्री ने कुछ अर्ज करना चाहा। लेकिन राजाने उसकी कुछ न सुनी और दरबार बर्खास्त कर दिया।

मन्त्री राजा को सावधान करना चाहता या कि "हुजूर! यह कोई धोखे की बात है। नहीं तो यह हनुमान और जाम्बवान का गुरु कैसे बन सकता है।" लेकिन राजा ने उसको कुछ कहने का मौका ही नहीं दिया। लाचार होकर मन्त्री ने उस आदमी को रोज छप्पन व्यञ्ञनों और तरह तरह के पकवानों के साथ खिलाने का इन्तजाम कर दिया। कुछ ही दिन में दुबला-पतला महाबल मोटा-ताजा बन गया और शान से गर्दन उठा कर, तन कर चलने लगा।



आखिर राजा ने एक दिन उसे दरबार में बुलवाया और पूछा-"क्यों जी ! अब तुम पहाड़ ढो सकते हो !" "हुजूर! एक क्या, आज्ञा दें तो पचासों पहाड़ उठा ले जाऊँ।" महावल ने छाती फुला कर कहा। उस का हियाब देख कर मन्त्री को भी अचरज हुआ। तब राजा ने अपने पुरोहित को बुला कर पहाड़ ढोने के लिए एक मुहूर्त ठहरवाया। धीरे-धीरे दूर दूर तक यह खबर फैल गई कि फलाना रोज महाबल नाम का कोई वीर पहाड़ उठा लाने जा रहा है। बस, तमाशा देखने के लिए हजारों लोग इस दिन उस पहाड़ के पास जमा हो गए।

ठीक समय पर महावल उस पहाड़ के नजदीक जाकर खड़ा हो गया। राजा भी अपने सभी दरबारियों के साथ नजदीक ही खड़ा था। "हुजूर! मैं इस पहाड़ को उखाड़ कर को फेंक दूँ ?" महाबल ने राजा से पूछा। "यहाँ से पचास मील की दूरी पर समुन्दर है। तुम इस पहाड़ को ले जाकर समुन्दर में फेंक दो।" राजा ने कहा। "बहुत अच्छा!" कह कर महावल ने गमछा सर पर लपेट लिया और पहाड़ के पास घुटनों के बल बैठ गया। फिर उसने तमाशा देखने के लिए आए हुए हजारों आदमियों की ओर फिर कर कहा- "भाइयो! आप लोग कृपा करके इस पहाड़ को उठा कर मेरे सर पर रख दें तो मैं इसे उठा कर समुन्दर में फेंक आऊँ।" उसकी बात सुन कर सब लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। "महाराज खड़े देख रहे हैं। आप लोग देर न कीजिए ! जल्दी आकर हाथ बँटाइए।" महाबल ने फिर उनकी तरफ देख कर कहा। "पहाड़ उठाने में कौन हाथ बँटा सकता है ! हम उसे उठा कर तुम्हारे सिर पर नहीं रख सकते।" आखिर लोगों ने उससे कहा। "तो क्या आप लोग हजारों आदमी मिल कर इतना भी नहीं कर सकते ! तो क्या आप सब लोग मुझ अकेले से इसे उठवा कर तमाशा देखने आए हैं। जाइए! जाइए सब अपने अपने घर। में उतना बेवक़ूफ़ नहीं हूँ।" महाबल ने लोगों से कहा।

राजा ने सोचा कि उसका कहना ठीक है। "जब सब लोग मिल कर इतना भी नहीं कर सकते तो वह बेचारा अकेला क्या कर सकेगा?" यह सोच कर राजा लौट गए। लोग भी महाबल की चालाकी पर मन ही मन हँसते हुए अपने अपने घर चले गए।





बाप और बेटा



"आप मुझसे सम्हाल कर बातें कीजिए। अब तक आपने मुझको एक बेवक़ूफ़ समझ रखा था। लेकिन अब आपको कम से कम मेरी सूरत-शक्ल की खातिर करनी होगी। नहीं तो कहे देता हूँ, सारा खेल बिगड़ जाएगा! अब पीटना मेरे हिस्से में है और मार खाना आपके हिस्से में। अगर अब भी आप मुझसे एक लड़के की तरह पेश आइएगा, तो घर के नौकर-चाकर मेरी इज्जत क्या करेंगे; सामने ही मेरी हँसी उड़ाने लगेंगे। मैं यह बर्दाश्त नहीं करूँगा। जहाँ तक हो सके, घर का सारा काम का मैं ही देखूँगा। आपने अब तक कभी एक फूटी कौड़ी भी मुझे नहीं दी। अब आपको उसका मजा मालूम हो जाएगा। कल से आप मेरे बदले स्कूल जाकर पढ़ा कीजिए। देख लीजिएगा कि मेरे मास्टर कैसे है !" नारायण ने कहा।

ये बात सुनकर राजाराम क्रोध से जल उठा। "तो क्या तुम चाहते हो कि मैं इस उम्र में जाकर दूसरी श्रेणी में पढ़ा करूँ ?" उसने कहा।

"आप तो पहले ही से पढ़े-लिखे हैं। इसलिए आपको ज्यादा दिक्कत न होगी !" नारायण ने कहा।

"मैं स्कूल हरगिज नहीं जाऊँगा।" राजाराम ने साफ साफ कह दिया।

"नहीं जाइएगा तो मास्टर खुद आएगा और मारते-पीटते घसीट ले जाएगा।" नारायण ने कहा।

"तो तुम मुझे पिटवाओगे ?" बाप ने गुस्से से पूछा।

"क्या आपने मुझे नहीं पिटवाया था ?" बेटे ने कहा।

तब राजाराम ने घोड़ी देर सोच-विचार कर पूछा- "तो क्या मास्टर खूब पीटता है ?"

"कहना ही क्या ? सबक पढ़ने पर भी पीटेगा। नहीं पढ़ने पर भी पीटेगा। लड़कों की मलाई के लिए पीटेगा। अपने हाथ की खुजली मिटाने के लिए पीटेगा। जब उसे



और कुछ नहीं सूझेगा तो लड़कों को पीटने लगेगा। उसका मन है- "दण्डम् दुश गुणम् भवेत्।" नारायण ने कहा।

"अगर मास्टर मुझे पीटने लगे तो ?" राजाराम ने उदास हो कर पूछा।

"जब उसने मुझे पीटा था तब ?" नारायण ने पूछा-"क्या आपने उससे नहीं कह रखा था कि पीटने में कभी आगा-पीछा न कीजिएगा।"

राजाराम की यह देख कर बड़ा गुम्सा आया कि नारायण अक मौका देख कर इस तरह उनसे कला तुकना चाहता है। लेकिन बेचारा करता क्या ? "क्या तुम समझते हो कि मैं तुम्हारी चालवाजी देखते हुए चुपचाप बैठा रहूँगा ! मैं अभी जाकर सब से कह दूँगा कि तुम राजाराम नहीं हो! यह न समझ लेना कि तुम आसानी से बच जाओगे !" राजाराम ने कोच से कहा।

नारायण उठा कर हँसने लगा। अब उसे डर नहीं लग रहा था। "ठीक है। नौकरों को बुलाइए। उनसे सच सच बता दीजिए। देखें, वे मेरी बातों पर विश्वास करते हैं या आपकी बातों पर ! अभी देख लीजिएगा।" यह कह कर नारायण ने महाराजिन को बुलाया। वह दौड़ी-दौड़ी आई।

"देख में ही राजाराम है। यह नारायण है। हम दोनों की सूरत-शकल में हेर-फेर हो गया है।" राजाराम ने उससे कहा।

"मैया रे मैया ! तनिक सा लड़का बातें केसी करता है !" महाराजिन ने होठ पर उँगली रखी और नारायण की ओर गौर से देखते हुए कहा।

"भूख के मारे आज नारायण का दिनारा घास चरने गया है। अन्दर ले जाकर इसे पेट भर कचौड़ियाँ खिला दो!" नारायण ने महाराजिन से हँसते हुए कहा।

"बदमाश की ऐसी बातें सुन कर उसे दो तमाचे लगाना चाहिए। उलटे उसे कचौड़ियाँ खिलाने का आदेश दिया जा रहा है। आपने ही उसको सर चढ़ा लिया है।" यह कह कर महाराजिन ने गुस्से से नारायण की बाँह पकड़ी और खींचती हुई अन्दर ले गई। फिर भी राजाराम चिल्लाता गया कि वही राजाराम है। लेकिन सब फिजूल। आज तो महाराजिन जैसे उससे खार खाए बैठी थी। उसके बाद उसने नौकर से भी अकेले में यही कहा। "रे भोला ! मैं ही तुम्हारा मालिक हूँ। मैं ही राजाराम हूँ।" राजराम ने उससे कहा।



"इसमें क्या शक है छोटे बाबू !" भोला ने मटकी मारते हुए कहा।

"मैं तुमसे सब कहता हूँ, तुम्हें यकीन हो या न हो।" राजाराम ने कहा। भोला खिलखिलाता चला गया।

राजाराम बाबला सा हो गया। कोई उसकी बातों पर विश्वास नहीं करता था। उलटे वह जो कुछ कहता, लोग उसके बेटे से कह देते थे।

रात को नारायण ने राजाराम को सलाह दी-"आप घबराकर हरेक से यह न कहते फिरिए कि में ही राजाराम हूँ। कहीं लोग यह न समझ ले कि आप पागल हो गए है। तब लोग जबर्दस्ती घसीट कर आप को पागल खाने में ठूँस देंगे। कुछ दिन तक चुप रह जाइए। जो होगा सो देखा जाएगा।"

धीरे धीरे महाराजिन को उस लड़के बेचारे पर तरस आया। उसे क्या मालूम था कि वही राजाराम है। उसने सोचा- "मान लिया कि नादान लड़का स्कूल से भाग ही आया है। तो क्या उसे भूख मार देना चाहिए ! ओह, क्या करूँ ! उसे कचौड़ियाँ कैसे दूँ। बड़े बाबू ऊपर आसन जमा कर बैठे हुए हैं।" इतने में उसे



अचानक याद आ गया कि रसोई की कुछ चीजें खतम हो गई है। वह तुरन्त दौड़ी गई और कहने लगी- "सबेरे ही कह दिया था कि चावल खतम हो गया है। लेकिन आप अभी तक बाजार नहीं गए । जाइए, दाल - चावल भी लेते आइए जिसमें बार बार परेशान होना न पड़े।" ये बातें सुनते ही नारायण (जो राजाराम के रूप में था) ठठा कर हँसने लगा। लेकिन तुरन्त उसे याद आ गया कि वह राजाराम है। उसने हँसना बन्द कर दिया और चुटकी बजाते हुए कहा-"तो हुआ क्या ? अभी ले आता हूँ।"

राजाराम को जो बड़े गम्भीर स्वभाव के मनुष्य थे, बच्चों की तरह हँसते-बोलते देख कर महाराजिन को बड़ा अचरज हुआ। लेकिन जल्द ही वह यह बात भूल गई। नारायण ने कुर्सी में से उठ कर अपनी जेब से कुञ्जियाँ निकाली और अलमारी खोली। फिर उसने बड़ी देर तक गिन कर नोटों का एक बण्डल जेब में रख लिया और बाजार चल दिया।

मालिक के बाहर जाते ही महाराजिन ने नारायण को पुकारा। लेकिन उसका

कहीं पता न था। पहले जब कभी पिता घर में न होते तो नारायण के शोर-गुल के मारे आस-पड़ेसवालों की नाक में दम हो जाता। लेकिन आश्चर्य ! आज सारा घर सुनसान पड़ा था। "नारायण नारायण" चिल्लाती महाराजिन सारे पर में ढूँढ़ने लगी। आखिर नारायण उसे बड़े बाबू के कमरे में एक कुर्सी पर बैठा, ध्यान में डूबा हुआ दिखाई दिया। "कितना पुकारा तुम्हें। चुपचाप बैठे क्या सोच रहे हो यहाँ ?" महाराजिन ने उससे कहा।

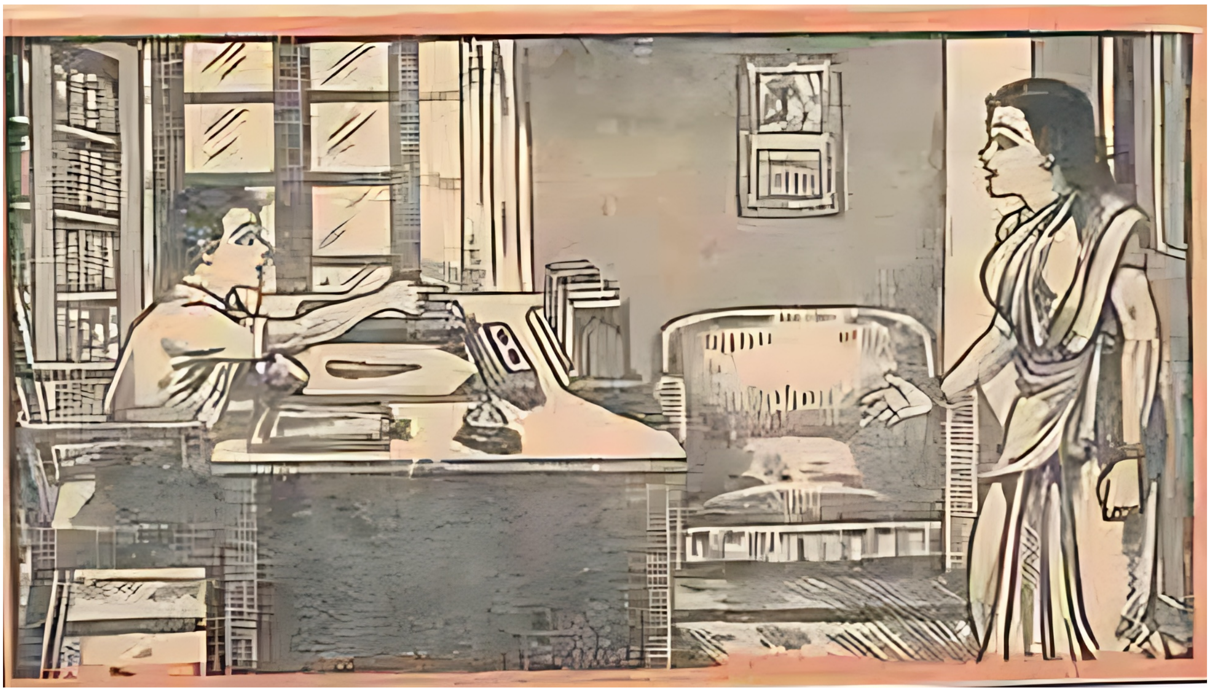
राजाराम ने चौक कर सिर उठाया और उसकी ओर बक्र-दृष्टी से देख कर कहा-

"आज तू क्यों इस तरह मेरे पीछे पड़ी है? जा, अपना काम देख!"

"मैं तुमसे कहे देती हूँ; तुम्हारे ये लच्छन मुझे अच्छे नहीं लगते। रोज-रोज तुम सिर चढ़े जाते हो।" यह कह कर महाराजिन ने एक तश्तरी में कचौड़ियाँ लाकर उसके सामने रख दी। तश्तरी को देख कर राजाराम पहले तो डर गया। लेकिन फिर भूख के मारे अन्तड़ियाँ जली जा रही थी। इधर-उपर देख कर जल्दी-जल्दी सारी कचौड़ियाँ मुँह में ठूँस ली। उसके बदन में फुर्ती जान पड़ी। पेट का दर्द गायब। उदासी का कहीं नामो निशान नहीं। शरीर बदल जाने के कारण राजाराम अब तक दुख ही दुख भोग रहा था।

लेकिन अब उसको मालूम हुआ कि इस में कुछ सुख भी है। बहुत दिनों से बदहजमी की शिकायत थी उसे। वह गायब हो गई। वह अब जो चीज चाहे खा सकता है। सारा शरीर हलका जान पड़ता है। अब उसका दौड़ने और उछलने-कूदने का मन होता है। कुछ दिन तक उसे घर के जञ्जाल से भी छुट्टी मिल गई है। यह सब सोच कर राजाराम को बड़ी खुशी होने लगी।

उधर नारायण को भी इस परिवर्तन के कारण मन ही मन खूब खुशी होने लगी। वह बड़ी शान के साथ नोटों का बण्डल जेब



में रख कर बाजार गया और सामान खरीद लाया। वहाँ दुकान पर जाकर उसने बनिए से कुछ भी मोलतोल नहीं किया। जो दाम उसने बताया चुपचाप दे दिया और एक कुली के सिर पर सामान रख कर अकड़ते हुए घर लौटा। आते-जाते एक दुकान पर रुक गया और दो तीन खिलौने खरीद लिए। राह में बहुत से लोगों ने उसे देख कर दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। पहले तो नारायण को यह भी मान न हुआ कि लोग उसी को प्रणाम कर रहे हैं। लेकिन जब सुध आई सब फूला न समाया। वह मन ही मन खूब हँसा कि कैसा चकमा दिया है उसने ! इन प्रणाम करने वालों में से कुछ लोगों को वह जानता था। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्हें उसने पहले कभी नहीं देखा था। कभी कमी उसे डर भी लगा कि कहीं ये लोग उसे टोक कर बातें न करने लग जाये। लेकिन उस के सौभाग्य से उस दिन ऐसी कोई बात न हुई।

नारायण के घर लौटते-लौटते अन्धेरा हो गया था। घर घर में दिए जल गए। इतने में उसने देखा कि एक लड़का उसके घर के सामने पेड़ों की अन्धेरी छाँह में खड़ा होकर सीटी बजा रहा है। नारायण का हृदय



बाँसों उछल पड़ा। सीटी बजाने वाले लड़के का नाम मोहन था। वह पुराना दोस्त था। नारायण भी उसी के समान सीटी देने की कोशिश करने लगा। लेकिन बहुत कोशिश करने पर भी आज वह सीटी न दे सका। नारायण को बहुत दुख हुआ। लाचार होकर उसने पुकारा-"रे मोहन !"

मोहन ने उसकी तरफ देखा, लेकिन उसे नहीं देखा। साँझ की झुटपुटी में उसे मोटी तोन्द, गञ्जा सिर, दाढ़ी-मूँछ और चश्मा ही दिखाई दिए। "क्यों डरते हो मोहन ! अरे मैं हूँ नारायण। पहचाना नहीं ?" यह कहते हुए नारायण नजदीक आने लगा। लेकिन जब उस लड़के ने देखा कि उसे 'मोहन' कह कर पुकारने वाले नारायण के पिता हैं, तो उसके होश उड़ गए। इन्हीं ने कई बार नारयण को पीटा भी था कि "तुम उस आकरे मोहन का साथ छोड़ दो!" इसीलिए जब कभी नारायण को बुलाना होता तो मोहन उसके घर से थोड़ी दूर पर खड़ा होकर सीटी देता था। सीटी सुनते ही नारायण मोहन को पहचान लेता और घर से भाग आता। अब मोहन ने सोचा कि आज उन दोनों का भण्डा फूट गया है। इसीलिए नारायण के बदले राजाराम आ रहे हैं। वह



सिर पर पाँव रख कर वहाँ से भाग खड़ा हुआ। "बेवकूफ ! भागते क्यों हो ? मैं ही हूँ।" कहते हुए नारायण उसकी ओर आने लगा। लेकिन मोहन भला क्यों रुकने लगा ?

"कौन ! पण्डित जी ? आप छोटे बाबू को पुकार रहे हैं क्या ?" किसी ने नारायण से पूछा। उसने तुरन्त भाग कर घर में पनाह ली।

उस रात नारायण अपने पिता के पलङ्ग पर सोया। "यह जिन्दगी भी बुरी नहीं है। जेब हमेशा गरम रहती है! सब लोग इज्जत करते हैं। लेकिन मुश्किल तब आती है, जब नए आदमी आकर बातें करने लगते हैं। इस के अलावा मेरे पुराने दोस्त देखते ही डर कर भागने लगते हैं। फिर भी यही जिन्दगी अच्छी है । बचपन से बढ़ कर कोई दण्ड नहीं। संसार बड़ों का है।" नारायण ने पड़े पड़े सोचा। उस रात उसे अच्छी तरह नींद न आई। रोज वह आठ बजते बजते सो जाता था। लेकिन आज वह बड़ी देर तक बिस्तरे पर पड़ा करवटें बदलता रहा। उधर राजाराम अपनी सारी तकलीफें भूल कर नौ बजने के पहले ही गाढ़ी नींद में डूब गया। नारायण तड़के ही उठा। बिस्तरे से उठ कर वह बेचैनी से सभी कमरों में घूमने लगा। घूमते घूमते आइने के सामने वो आ खड़ा हुआ तो गञ्जा सिर और दाढ़ी-मूछें दीख पड़ीं। लेकिन यह देखने के लिए भी उसे चश्मे की जरूरत पड़ी।

धूप चढ़ आई, लेकिन उधर राजाराम नहीं जागा। इतने में स्कूल से एक लड़का नरायण को बुलाने जाया। वह नारायण को अच्छी तरह जानता था। लेकिन आज उसने पहचाना नहीं। उसने कहा- "जी! आपके लड़के नारायण को मास्टर साहब ने बुला लाने को कहा है।"

राजाराम उठा। उसने रोज की तरह महाराजिन को पुकारा। पर महाराजिन सुन कर भी अनसुनी कर गई।

[सशेष]





पश्चिम की घाटियों में बहुत घने जङ्गल हैं। दन जङ्गलों में झुण्ड के झुण्ड हाथी घूमा करते हैं। जङ्गलों में रहने वाले शिकारी कई तरह से उन हाथियों को फँसाते हैं और मार पीट कर उन्हें पालतू बनाते हैं। फिर वे उन्हें राजे और रईस, जमींदार जागीरदार या बड़े बड़े मठाधीशों के हाथ बेच देते हैं। इस तरह शिकारी खूब रुपया कमाते हैं।

हाथियों को पकड़ कर बेचने वालों में वासू नाम का एक आदमी था। वासू के कारी, तानी और चेरा नाम के तीन लड़के थे। बचपन से ही उन तीनों ने बाप के साथ हाथियों के शिकार में बड़ी प्रवीणता पाई। धीरे धीरे जब वासू बूढ़ा हो गया और चलने-फिरने के लायक नहीं रहा तब उसके तीनों लड़कों ने बाप का रोजगार अपने हाथों में ले लिया। यों उनका पैतृक व्यापार बेरोक-टोक चलता रहा।

बस अब बहुत ही बूढ़ा हो गया था। एक दिन ऐसा भी आ गया जब उसे मालूम हुआ कि वह अब कुछ घड़ियों का ही मेहमान है।

इसलिए अन्त काल निकट जान कर उसने अपने तीनों लड़कों को अपने बिछौने के पास बुलाया और कहा- "बच्चो ! में अब कुछ क्षणों का ही मेहमान हूँ। मेरे पास कोई बड़ी जायदाद तो नहीं है। जो कुछ है, बस हाथी ही। इसलिए तुम तीनों मेरे कहे अनुसार हाथियों को आपस में बाँट लो। कारी ! तुम आधे हाथी लो। तानी को तीसरा हिस्सा दो। चेरा को नवाँ हिस्सा दो। यह कह कर बूढ़ा चल बसा।



ज्यादातर ऐसा होता है कि जब बाँट-बखरा होता है तो बराबर हिस्सा लगाया जाता है। लेकिन ये लोग तो जङ्गली आदमी थे। उन में रिवाज था कि पिता जैसा कहें बँटवारा वैसे ही हो। कोई यह नहीं सोचता कि किसको कितना मिला। वे लोग जायदाद के लिए आपस में नहीं झगड़ते और न मन में ही कोई मैल रखते।

इसलिए बालू के लड़कों में भी जायदाद के लिए कोई झगड़ा नहीं हुआ। पिता का श्राद्ध कर्म करने के बाद तीनों बँटवारा करने बैठे। पर बाँटने में एक मुश्किल खड़ी हो गई। बात यह थी कि कुल मिला कर उनके सत्रह हाथी थे।

जब बड़े ने उन में से आधे ले लेना चाहा तो उसे यह न सूझा कि उनको कैसे बाँटा जाय। यही मुश्किल तानी और वेरा के हिस्से बाटने में भी उठ खड़ी हुई। सत्रह का तीसरा हिस्सा और नवाँ हिस्सा कैसे बाँटा जाय !

उन्होंने बहुत देर तक सोचा-विचारा। आखिर कारी ने कहा-"भाइयो! यह बेकार की उलझन क्यों ? सत्रह का आधा साढ़े आठ होता है। यानी आठ पूरे हाथी और एक का आधा हिस्सा। इसलिए आठ पूरे हाथी और नवें हाथी का आधा हिस्सा काट कर मुझे दे दो। क्यों, यह ठीक है न?"

"इस हिसाब से हम कितने पाएँगे ?" उसके भाइयों ने, तानी और चेरा ने पूछा।

"तानी को पाँच और दो तिहाई हाथी मिलेगी। तुम को एक हाथी और एक का टुकड़ा मिलेगा।' कारी ने चेरा से कहा।

तब तीनों भाइयों ने कहा-"चलो ! बँटवारा करें।"

इस तरह उन्होंने हाथियों को कतार में खड़ा किया और पूरे हाथी बाँट लिए। बाकी हाथियों के टुकड़े करने के लिए उन्होंने अपनी कुल्हाड़ियाँ उठाई।

ठीक उसी समय एक राजा हाथी पर चढ़ा वहाँ आ पहुँचा। यह इस जङ्गल में शिकार खेलने जाया था। जब उसने वह तमाशा देखा तो रुक गया और हैरान होकर पूछा-"अरे, रे! यह तुम क्या करते हो। इन हाथियों को क्यों मारने जा रहे हो ?" तब उन्होंने सारी कहानी कह सुनाई।

राजा ने मन में सोचा-"कैसे बेवकूफ हैं ये लोग ! बाँटने के नाम पर इन तीनों हाथियों की जान लेने जा रहे है। समझाने बुझाने से ये शायद ही मानें।" इसलिए उसने एक युक्ति सोची।

उस ने कहा-"तुम तीनों अपने पिता के वचन के अनुसार इन हाथियों को बाँट लेना चाहते हो। ठीक है । मुझे तुम लोगों की पितृ-भक्ति देख कर बड़ी खुशी होती है। इसलिए मैं



अपना हाथी भी तुम्हें दे देता हूँ। अब इन अठारह हाथियों को आपस में बँटवारा करने में कोई दिकत नहीं होगी।"

तीनों भाई राजा की उदारता पर बहुत खुश हुए। उन्होंने राजा के हाथी को भी अपने सत्रह हाथियों की कतार में खड़ा कर दिया।

पिता के कहे अनुसार बड़े लड़के कारी ने अपना आधा हिस्सा यानी नौ हाथी ले लिए और उन्हें दूर हाँक ले गया। फिर तानी ने अठारह का तीसरा हिस्सा यानी छः

हाथी ले लिए और वह भी उन्हें हाँक ले गया। फिर चेरा ने अठारह का नवी हिस्सा याने दो हाथी ले लिए और खुशी खुशी वहाँ से चला गया।

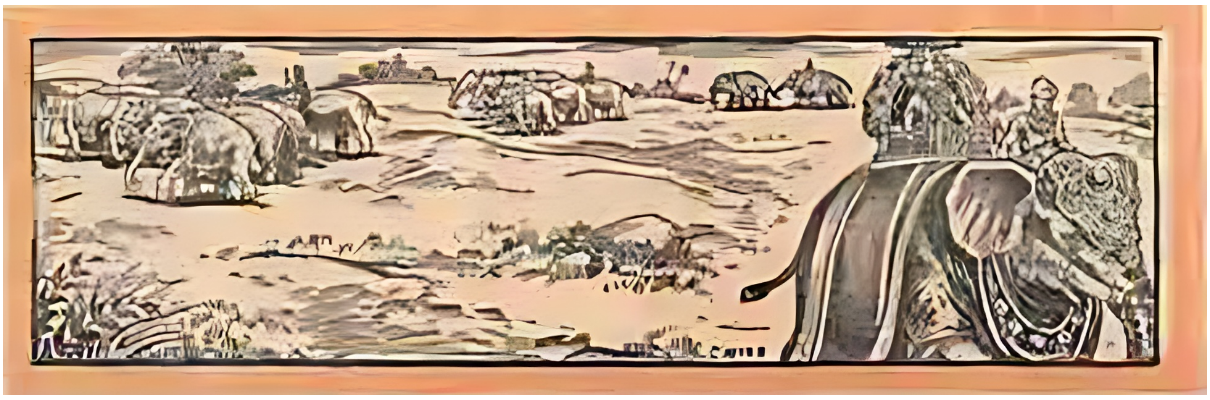
जाते समय तीनों फूले न समा रहे थे। क्योंकि कारी को, जिसने समझा था कि उसे आठ हाथी और एक हाथी का आधा हिस्सा मिलेगा, अब नौ हाथी मिल गए थे।

तानी को, जिसे पाँच हाथी और कुछ टुकड़े मिलने चाहिए थे, पूरे छः हाथी मिले।

इसी तरह चेरा को भी अपने हिस्से से ज्यादा ही, पूरे दो हाथी मिल गए थे। इसलिए तीनों ने अपनी अपनी राह में जो जान पहचान का मिला, उसे झट बता दिया कि फलाना राजा ने हमें अपना हाथी ईनाम दिया है।

लेकिन असल में जो तमाशा हुआ उसे वे नहीं समझ पाए। बात यह थी- -कारी के नौ, तानी के छः और चेरा के दो, कुल तीन हिस्से मिला कर सत्रह ही हाथी होते हैं। यानी राजा का हाथी उसी के पास बचा रहा। बँटवारे की सुविधा के लिए उसने अपने हाथी को सिर्फ उनके हाथियों की कतार में खड़ा कर दिया था।

राजा के इस कौशल से सिर्फ बँटवारा करने में सुविधा ही न हुई, बल्कि तीनों में मनमुटाव होते रह गया और इस तरह उनकी मूर्खता से प्राण खोने वाले हाथियों की जान भी बच गई।





किसी समय झगडू नाम का कसाई रहता था। वह रोज कम से कम पचास प्राणियों का वध किया करता था। उसका यह बाप-दादों का पेशा था। इसलिए उसके हृदय से दया माया स दूर हो गई थी और उसे उस काम में तनिक भी हिचकिचाहट नहीं होती थी।

बहुत दिन बाद झगडू की एक लड़की पैदा हुई।

इसके बाद कुछ दिनों में उस लड़की की माँ स्वर्ग सिधार गई। झगडू ने उस नन्हीं लड़की का नाम "अम्बा" रखा और उसे बड़े प्रेम से पालने लगा। अम्बा के पैदा होने के बाद उस के निर्मम, सूखे जीवन में प्रेम की धारा बहने लगी।

धीरे धीरे अम्बा कुछ बड़ी हुई। वह जैसी रूपवती थी बैसी गुणवती भी हुई। उसका हृदय तो करुणा की खान ही था। उसे देख कर लोग मन ही मन सोचते- "आहा ! झगडू ने पहिले जन्म में कौन से पुण्य किए थे जिसके कारण यह लड़की उसके घर पैदा हुई।"

सबसे अजीब बात तो यह थी कि कसाई के घर पैदा होकर भी अम्बा ने कभी माँस नहीं छुआ।

एक दिन झगडू अपनी दूकान पर बैठा हुआ था। एक आदमी एक सुन्दर बछड़े को बेचने के लिए उसके घर की ओर आया।

तब उस बछड़े को देखते ही अम्बा ने तुरन्त रूपए देकर खरीद लिया। शाम को झगडू घर आया तो उसने देखा कि अम्बा एक सुन्दर बछड़े के साथ खेल रही है। उसे बडा अचरज हुआ।

लेकिन उसे अपनी लड़की से बड़ा प्रेम था। इसलिए वह कुछ नहीं बोला।



पिता को देखते ही अम्बा दौड़ कर उसके पास गई और बोली-" बापू! देखो तो यह बछड़ा कितना सुन्दर है! गोद में उठा लेने की इच्छा होती है। जरा नथुने देखो तो कैसे अच्छे हैं। चमकती हुई आँखें तो देखो ! बापू, देखो तो यह तुमको किस तरह देख रहा है।" इतने में बछड़ा दौड़ता आया और अम्बा का हाथ चाटने लगा। अम्बा उसके गले से लिपट गई और अपने हाथ से उसका सिर सहलाने लगी। अम्बा की बातें सुन कर, बछड़े पर उसका इतना प्रेम देख कर झगड़ू के मन में बड़ा अचरज हुआ।

अम्बा फिर दौड़ती आई और उसके पास बैठ कर बोली-"बापू ! देखो तुम मेरे बछड़े को। वह 'अम्बा ! अम्बा !' कह कर रम्भाता है। उसे मेरा नाम किसने सिखा दिया बापू ?क्या तुमने सिखा दिया है ! बापू, एक बात तुमसे कहना चाहती हूँ। पर डरती हूँ कि कहीं तुम नाराज न हो जाओ।"

"तुम डरती हो अपने बापू से! बेटी पर भी कोई गुस्सा होता है।" झगड़ू ने उसे दुलारते हुए कहा।

"तो सुनो, रोज बछड़ों को मारते-मारते तुम्हारे हाथ गन्दे हो गए हैं। उन हाथों से तुम मेरे बछड़े को न छूना ! बापू, क्या तुम नाराज हो गए ? मेरी कसम खाकर कहो तो भला !"

अम्बा ने अपना नन्हा हाथ पिता के गले में डाल दिया। ये भोली बातें सुनते ही झगड़ू के हृदय में हलचल पैदा हो गई।

उस रात को जब सारा संसार गाढ़ी नींद में ड्बा हुआ था, किसी ने आकर झगडू का दरवाजा खटखटाया।

झगडू की नींद टूट गई और उसने आँखें मलते हुए किवाड़ खोले। गाँव का जमींदार देहली पर खड़ा था।

उस जमीदार का नाम सुनते ही आस-पास के गाँवों के सब लोग डर से काँप उठते थे। इतनी रात को उसे आया देख झगड़ू घबरा गया। उसके मुँह से बात तक न निकली।

"देखो, झगड़ू! मेरे घर दो मेहमान आ पहुँचे हैं। इसलिए तुम्हारे यहाँ जितना भी अच्छा माँस हो, मेरे नौकर को दे दो। यह बहुत जरूरी है। इसलिए मैं खुद आया हूँ।" जमींदार ने कहा।

यह सुनते ही झगड़ू का मुँह सूख गया। क्योंकि आज उसके पास माँस का एक टुकड़ा भी न बचा था। अब वह जमींदार को क्या जवाब दे ! कौन मुँह दिखाए ?

"हुजूर! आप तशरीफ ले जाएँ। में माँस अभी लिए आता हूँ।" उसने जमींदार से कहा। "नहीं, तुम कहो तो मैं यहीं ठहर कर उसे अपने साथ ले जाऊँगा। जरा जल्दी करो !" यह कह कर जमींदार वहीं जम कर बैठ गया।

लाचार हो कर झगड़ू अम्बा के बछड़े की रस्सी खोल कर घसीटते हुए उसे कसाईखाने की ओर ले चला। बछड़ा करुण स्वर से रम्भाने लगा।



अम्बा चौक कर जाग पड़ी। उसने बाहर आकर देखा तो बछड़े का कहीं पता न था । तुरन्त सारा हाल उसकी समझ में आ गया। एक गली से हो कर वह दौड़ी और अपने पिता से पहले ही कसाई खाने में पहुँच गई। वहाँ उसने काठ के कुन्दे पर अपना सिर रख दिया और पिता की राह देखने लगी। बछड़े को घसीटता झगड़ू यहाँ आया तो यह दृश्य देख कर आवक रह गया। उसके पाँव तले से धरती खिसक गई। उसका सर चकराने लगा और वह गश खा कर वहीं गिर पड़ा।

थोड़ी देर बाद जब उसे होश आया तो अपने काँपते हाथों से उसने अम्बा को गोद में लेना चाहा।

लेकिन अम्बा जोर से चिल्ला उठी- "बापू ! मुझे छूना मत ! क्या इतनी जल्दी तुम अपनी बात मूल गए। लो, पहले मुझे मार डालो।" उसने कहा।

ये बातें सुनते ही झगडू "हाय ! अम्बा ! तुम्हारा कहना सच है।" यह कह कर फिर बेसुध होकर गिर पड़ा। वहाँ झगडू के आने में देर होती देख कर जमींदार साहब झुँझला उठे और मन ही मन उसे कोसते हुए कसाई खाने की ओर चल दिए।

यहाँ आकर उन्होंने जब यह दृश्य देखा तो कुछ भी उनकी समझ में न आया। झगडू के होश में आने के बाद उन्हें सारी बात मालूम हो गई।

इतने में बछड़ा फिर करण-स्वर से रम्भाया।

अम्बा दौड़ कर उसके गले से लिपट गई। झगडू ने दोनों हाथ उठा कर जमींदार को सलाम किया और कहा- "हुजूर! इसी क्षण से मैंने यह पेशा छोड़ दिया। आप मुझे माफ करें।"

बछड़े के गले से लिपटी हुई अम्बा को देख कर जमींदार का भी दिल पानी पानी हो गया। "झगडू | तुमने अपना पेशा छोड़ दिया। लो सुनो ! आज से मैं ने भी माँस खाना छोड़ दिया। इतना ही नहीं, मैं अपने मित्रों से भी कह कर यह बेरहमी आदत छुड़वा दूँगा। जाओ, तुम्हें किसी से डरने की जरूरत नहीं।" यह कह कर जमींदार खुशी-खुशी घर लौट गए।





मालव देश के राजा भूपसिंह के एक ही बेटी थी। उस का नाम था सुरूपा। सुरूपा अपने नाम के ही अनुसार बहुत सुन्दरी थी। उससे व्याह करने के लिए बहुत से राजकुमार लालायित थे। लेकिन राजा भूपसिंह का विचार था कि वे अपनी बेटी किसी ऐसे राजकुमार को व्याह दें जो सुन्दरता के साथ साथ शुरता और साहस में भी अपना सानी न रखता हो। इस के लिए उसने एक अच्छा उपाय सोचा।

राजा भूपसिंह के पास एक बड़ा अनमोल मोती था। वह मोती बतख के अण्डे जितना बड़ा था। राजा ने निश्चय किया कि जो उस मोती जैसा और एक मोती ला देगा, उससे राजकुमारी का व्याह होगा। उसके आस-पास के सभी राज्यों में यही घोषणा सुना दी गई।

तब बहुत से राजकुमार सुरूपा से व्याह करने की कामना से उस मोती की जोड़ी लाने चले। पर अनेक वर्ष बीत जाने पर भी उनमें से कोई नहीं लौटा। आखिर नरनाथ नाम का एक राजकुमार मोती की खोज में निकला। नरनाथ अपने राज से निकल कर दस कोस जाते जाते थक गया और सुस्ताने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठ गया। बैठे बैठे जब उसने एक बार सर उठा कर ऊपर देखा तो पेड़ पर नीलकण्ठों की एक जोड़ी दिखाई दी। दोनों न जाने क्यों आँसू डाले जा रहे थे। यह देख नरनाथ ने उनसे पूछा-"तुम क्यों इस तरह रो रहे हो!" सब उन्होंने बताया-"एक ब्याध आज सवेरे आया और हमारे बच्चे को पकड़ ले गया। इसी से हम दोनों रो रहे हैं।" यह कह कर उन दोनों



ने व्याध निघर गया था, उपर इशारा कर दिया।

नरनाथ तुरन्त उस ओर चल दिया और उस व्याध के घर जा पहुँचा। "'भाई ! मुझे एक काम से एक नीलकण्ठ के बच्चे की जरूरत आ पड़ी है। गया तुम्हारे पास है ?" उसने उस व्याध से कहा। व्याध घर के अन्दर गया और नीलकंठ के बच्चे को लाकर उसे दे दिया। मरनाथ ने उसे एक सौ अशफियों भेंट की और नीलकण्ठ को ले जाकर उसके माँ-बाप और को सौंप दिया। चिड़ियों की जोड़ी की खुशी का ठिकाना न रहा। उन्होंने कहा-"हे राजकुमार ! आज तुमने हम पर जो एहसान किया है उसे हम जन्म भर न भूलेंगे। लेकिन बताओ, इसके बदले में हम तुम्हारी क्या सेवा करें ?" तब राजकुमार ने अपनी यात्रा का कारण उन्हें सुनाया और पूछा-"क्या तुम जानते हो कि वैसा मोती मुझे कहाँ मिलेगा ?"

यह सुन कर उन चिड़ियों ने कहा- "हे नरनाथ! तुम जिस मोती की खोज में चले हो उसके बारे में हम थोड़ा बहुत जानते हैं। इसमें एक बहुत बड़ा रहस्य छिपा हुआ है। लेकिन तुमने आज हमारे बच्चे की जान बचाई है। इसलिए हम तुम्हें यह बात बता देंगे। अब ध्यान से सुनो-- पुराने जमाने में मान- सरोवर का रहने वाला एक राजहंस किनारे पर अण्डे दिया करता था। वे अण्डे ही धूप में पड़े पड़े सूख जाते और ऐसे मोती बन जाते थे। ऐसा एक मोती राक्षस-राज जरासन्ध के पास था। समय के हेर-फेर से जरासन्ध का खजाना राजा भूपसिंह को मिल गया और साथ ही मोती भी। इसी मोती की जोड़ी कुबेर के पास थी। कुबेर ने वह मोती

विरूपाक्ष नामक राक्षस को दिया। विरूपाक्ष आज-कल सिंहल द्वीप पर राज्य करता है। उसने घोषणा की है कि जो कोई इस मोती का इतिहास बता देगा उसे वह मोती ही नहीं, अपना आधा राज भी देगा और ऊपर से अपनी बिटिया भी उसके साथ व्याह देगा। सारे संसार में इस तरह के दो ही मोती हैं। क्योंकि बाद में महादेव की आज्ञा से हंसों ने किनारे पर अण्डे देना बन्द कर दिया। अब तुम जान गए होगे कि उस मोती की जोड़ी तुम्हें सिंहल द्वीप में ही मिल सकती है। उन चिड़ियों ने मोती की जन्म कहानी कह सुनाई। तब राज कुमार नरनाथ ने उन चिड़ियों को बहुत धन्यवाद दिया और सीधे सिंहल द्वीप की ओर रवाना हुआ।

कई कोस जाने के बाद उसे बड़े जोर की प्यास लगी। लेकिन आस-पास कोई ऐसी जगह न थी जहाँ उसे पानी मिले। लेकिन थोड़ी दूर जाने के बाद उसे दूर पर कोई चीज़ धूप में झलमलाती, चमकती दिखाई दी। उसने सोचा कि पानी है। बस, बड़ी आशा लगा कर वह यहाँ पहुँच गया।



लेकिन वह तो एक बहुत बड़ा अजगर था। नरनाथ उसे देख कर चुपचाप खड़ा रह गया।

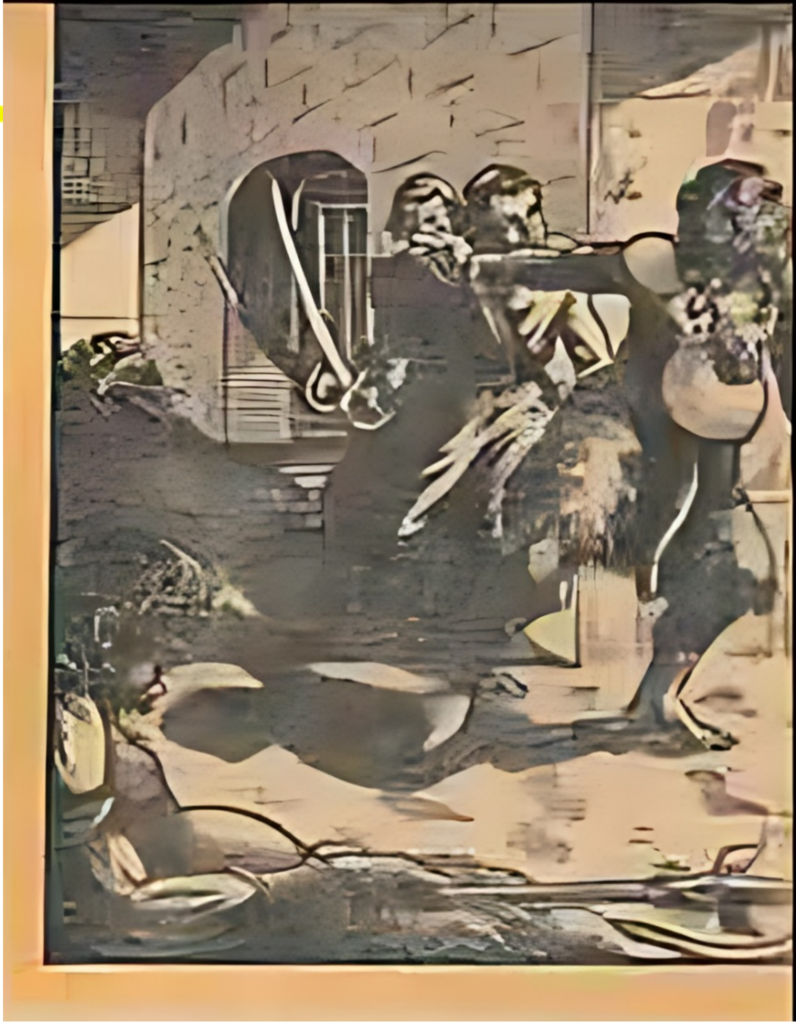
तब कुण्डली मार कर बैठे हुए उस भयङ्कर सर्प ने आदमी की बोली में कहा-"हे राजकुमार ! तुम बहुत प्यासे हो। मेरे साथ आओ। मैं तुम्हें पानी पिला दूँगा।" यह कह कर वह उसे अपने साथ एक अधेरी गुफा में ले गया। उस गुफा में कुछ दूर जाने पर एक सुन्दर महल और उस के चारों ओर एक बाग दिखाई दिया। इतने में बहुत से गन्धर्व चारों ओर से निकल आए



वे जल की झारिया लाकर राजकुमार के पैर धोकर आव-भगत करने लगे। उन्होंने ठण्डी शरबत लाकर उसे पीने को दी। इतने में राजकुमार ने देखा कि उसको जो वहाँ ले आया था वह अजगर भी गन्धर्व बन गया है। कारण पूछने पर उसने कहा-"मैं इन गंधर्वों का युवराज हूँ। मैं शाप के कारण अजगर बन गया था। एक मुनि ने मुझे बताया था कि तुम्हारी सेवा करते ही मेरा शाप छूट जाएगा। इसलिए मैं तुम्हें यहाँ बुला लाया।" यह सुन कर राजकुमार को भी बहुत खुशी हुई। उस दिन सारे गन्धर्व नगर में खूब खुशियाँ मनाई गई। दूसरे दिन राज- कुमार ने उनसे विदा माँगी तो बड़े आग्रह के साथ उन्हों ने कहा- "कुछ दिन यहीं ठहर जाइए।" लेकिन जब राजकुमार राजी नहीं हुआ तो उन्होंने उसे एक उड़ने वाला घोड़ा दिया।

राजकुमार उस घोड़े पर सवार होकर चला। जाते-जाते उसने देखा कि एक देव- कुमार राह में एक पेड़ के नीचे बैठे बैठे रो रहा है। उसने तुरन्त नजदीक जाकर पूछा कि बात क्या है? सब उस देव कुमार ने कहा -"मैं सिंहल देश की राजकुमारी के सौन्दर्य की प्रशंसा सुन कर उससे व्याह करने गया। लेकिन उसके पिता ने अपने खजाने से एक बतख के अण्डे जितना मोती मँगवाया और मुझसे उसकी जन्म कथा पूछी। में उसके प्रश्न का जवाब नहीं दे सका और अपना सा मुँह लेकर लौट आया। नरनाथ ने उस देव कुमार को धीरज बँधाया और उसे अपने साथ ले लिया। दोनों उसी घोड़े पर सवार हो कर वहाँ से चले। इस तरह जाते जाते जब रात हो गई तो वे आराम

करने के लिए एक जङ्गल में उतर गए। उन्होंने घोड़े को एक पेड़ से बाँध दिया और भूख मिटाने के लिए फलों की खोज में निकले। इतने में कुछ राक्षसों ने पेड़ों की आड़ से निकल कर उन्हें पकड़ लिया और कहा-"अच्छा ! बहुत अच्छा ! बहुत दिनों के बाद हमारे राजा के लिए मनुष्य का मांस मिल रहा है। ले चलो इन्हें मालिक के पास।" उनके राजा ने उन दोनों को कैद में रखने को कहा। बस, दोनों को एक जेल में बन्द कर दिया गया।



अब नरनाथ को बहुत दुख होने लगा कि उसके कारण नाहक इस देव कुमार की भी जान जा रही है। उसने एक बूढ़े रखवाले से अपना दुखड़ा कह सुनाया। उस बूढ़े को इन दोनों की जवानी देख कर तरस आ गया और उसने जेल का ताला खोल दिया। आधी रात को जब सभी लोग सो रहे थे, उसने इन दोनों को भगा दिया। दोनों खुशी खुशी भागे और जङ्गल में जाकर अपने घोड़े पर सवार हो गए। अब पकड़े जाने का डर न था। सवेरा होते होते वे दोनों सिंहल द्वीप जा पहुँचे। यहाँ एक सराय में उतरे। फिर नहा-धोकर राजसी पोशाक पहनी और राजा के पास अपने आने की खबर भेज दी। थोड़ी देर में सिपाहियों ने लौट कर कहा कि राजा उनकी राह देख रहा है। दरबार में जाने पर राजा ने दोनों की बड़ी इज्जत की और ऊँचे आसनों पर बिठाया। इसके बाद नरनाथ ने कहा-"मैं उस बतख के अण्डे जितने मोती की जन्म कथा कहने आया हूँ।" सब लोग कहानी सुनने को उत्सुक हो उठे। तब नरनाथ ने चिड़ियों से जो कहानी सुनी थी, राजा के सामने दुहरा दी।

राजा को बहुत अचरज हुआ कि यह कैसे जान सका। वह उठा और राजकुमार को अपने सिंहासन पर बिठा कर बोला-"हे राजकुमार! अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार मैं तुम्हें वह मोती और अधा राज दे देता हूँ। इतना ही नहीं, राजकुमारी भी अब तुम्हारी हो गई। मेरी इच्छा है कि तुम उससे शादी करके अब यहीं रह जाओ।"

तब राजकुमार ने कहा-"राजन्! आप की बातें सुन कर मुझे बड़ा हर्ष होता है। लेकिन मैं आप की बेटी से व्याह नहीं कर सकता। क्योंकि मैंने अपना हृदय पहले ही किसी दूसरे को दे दिया है। आप मुझे मोती दे दीजिए और अपनी बिटिया का ब्याह इस देव कुमार से कर दीजिए। बेचारा उसके लिए जान दे रहा है।"

यह सुन कर राजा ने राजकुमार को बहुत सराहा। दो-तीन दिन में उसने अपनी बेटी का व्याह बड़ी धूम-धाम के साथ देव कुमार से कर दिया। फिर उसने नरनाथ को वह अपूर्व मोती देकर बड़े प्रेम से विदा कर दिया। नरनाथ को बड़ी खुशी हुई कि इस तरह अनेक कष्ट उठा कर वह बतख के अण्डे जितना बड़ा मोती पा सका। इतना ही नहीं वह देव कुमार की भी भलाई कर सका। वह उड़ने वाले घोड़े पर सवार होकर थोड़े ही दिन में अपने देश मालव को लौट गया। उसने वह मोती ले जाकर राजा भूपसिंह को दे दिया।

राजा को भी बड़ी खुशी हुई कि इतने दिन बाद उसकी कुमारी कन्या के योग्य बर मिला। उसने बड़े ठाट-बाट से एक शुभ मुहूर्त में दोनों का ब्याह कर दिया। इस तरह उन अनमोल मोतियों की जोड़ी मिल गई।





एक समय काशीनाथ नाम का एक धर्मात्मा आदमी था। वह इतना दानी था कि उसके मुँह से कभी "नहीं" न निकलता था। वह देना ही जानता था, लेना नहीं। घमण्ड तो उसे छू तक न गया था और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उसको याद भी नहीं रहता था कि उसने कभी दूसरों की कुछ भलाई की है।

जिस तरह सूरज और चाँद बिना किसी कामना के जगत को रोशनी देते रहते हैं, जिस तरह फूल बदले में कुछ माँगे बिना अपनी सुगन्ध संसार को देते रहते हैं, उसी तरह काशीनाथ भी शुद्ध हृदय से संसार की सेवा किया करता था।

कुछ दिन बाद स्वर्ग में भी काशीनाथ की चर्चा होने लगी। उसे देख कर देवताओं को भी अचरज होने लगा। उन्होंने सोचा- "एक अदना सा आदमी संसार भर की इतनी भलाई कैसे कर रहा है। उसे बुला कर इसका रहस्य पूछना चाहिए।" यह सोच कर देवताओं ने अपने दूतों के साथ एक विमान भेजा और काशीनाथ को स्वर्ग में बुलाया। वहाँ उसका अच्छी तरह स्वागत-सत्कार करने के बाद देवताओं ने उससे कहा-"हे महापुरुष ! तुमने संसार की बड़ी भलाई की और इसके बदले में कभी किसी से कुछ नहीं लिया। आज हम तुम्हें कुछ न कुछ देना चाहते हैं। तुम जो चाहते हो, हम से माँग लो।"

काशीनाथ ने कहा-"मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है।"



देवताओं ने फिर पूछा-"क्या यह वरदान चाहिए कि जिस पर तुम हाथ डालो, उसकी सारी बीमारी दूर हो जाए।"

"नहीं; मुझे ऐसा वर नहीं चाहिए। एक भगवान ही मनुष्य के जीवन के स्वामी हो सकते हैं। मैं उतनी बड़ी जिम्मेदारी नहीं ले सकता।" काशीनाथ ने जवाब दिया।

"क्या हम तुमको ऐसा दिव्य रूप दें जिससे लोग देखते ही तुम्हारे भक्त बन जाएँ। फिर तुम उन्हें भगवान की भक्ति का उपदेश दे सकोगे।" उहोंने कहा।

"नहीं, नहीं; जब अधिकतर लोगमेरे पास जमा होने लगेंगे, तो मैं खुद भगवान को भूल जाऊँगा। भगवान की भक्ति उपदेश देने से नहीं होती। उसके लिए अपना तन-मन सब देना पड़ता है।" काशीनाथ ने उनसे कहा।

"तो क्या ऐसा वर लोगे जिससे तुमको देखते ही दुष्ट से दुष्ट भी सज्ञान हो जाए! इससे तुम्हारा यश सारे संसार में फैल जाएगा।" देवताओं ने फिर कहा।

"नहीं, नहीं; ये सब देवताओं के काम हैं। मैं इतना दम्भी नहीं होना चाहता !" काशीनाथ बोला ।

"हमारी तो कोई बात तुम्हें पसन्द न आई। तो फिर तुम्हीं कुछ माँगो !" देवताओं ने आग्रह किया।

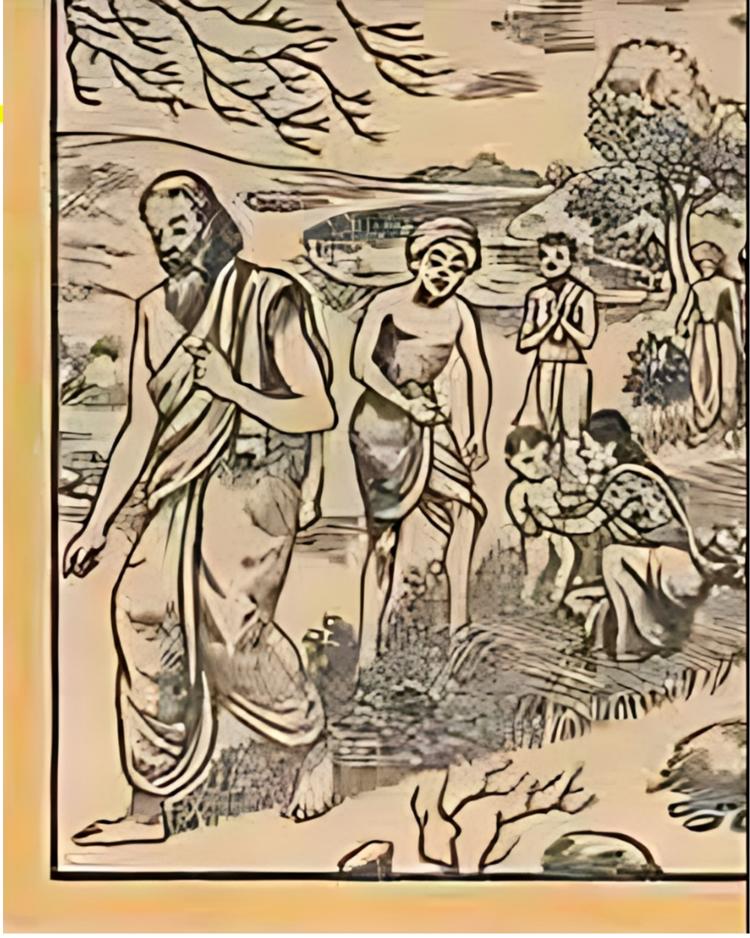
मैं भगवान की कृपा के सिवा और कुछ नहीं चाहता। मुझे और किसी चीज़ की जरूरत नहीं है। काशीनाथ ने किसी न किसी तरह देवताओं से पिण्ड छुड़ाना चाहा।

"अगर तुम कुछ नहीं माँगोगे, तो हम अपने मन से तुम्हें कुछ दे देंगे।" देवताओं ने दृढ़ता से कहा।

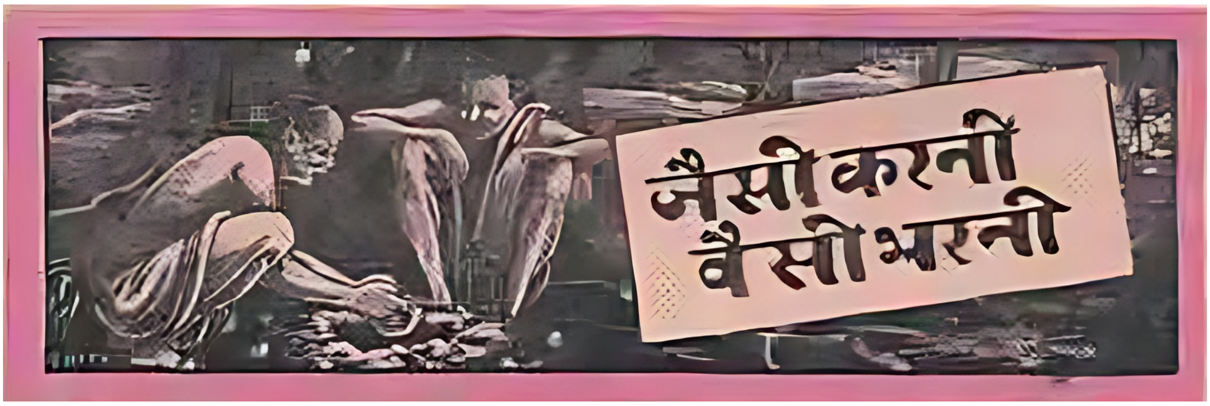
यह सुन कर काशीनाथ ने कहा- "देवगण! आपके हठ से मैं एक बर मागता हूँ। आप लोग मुझे ऐसी शक्ति दीजिए जिससे मैं अनजाने में ही संसार की मलाई करता रहूँ।"

यह सुनते ही देवता लोग घबरा गए। बहुत सोच-विचार कर उन्होंने काशीनाथ को एक विचित्र वर दिया। आदमी जब चलता है तो उसकी छाँह जमीन पर पड़ती है न ? हाँ, तो देवताओं ने काशीनाथ को ऐसा वर दिया जिससे उसकी छाँह में अद्भुत प्रभाव पैदा हो गया। उसकी छाँह छूते ही लोगों की भयङ्कर से भयङ्कर बीमारी दूर हो जाती थी। उसकी छाँह में चलने वाले सब तरह की चिन्ताओं से मुक्त हो जाते और तन्मय हो आनन्द से भर जाते थे।

काशीनाथ जब चलने लगता तो जितनी दूर उसकी छाँह पडती उतनी दूर तक ऊसर जमीन भी उपजाऊ हो जाती और ठूँठ भी फलने-फूलने लगते। उसके पैर रखते ही मरुस्थल में भी निर्मल जल के स्रोतें कल कल नाद करते हुए फूट निकलते। जब लोगों को यह



बात मालम हो गई तो वे काशीनाथ का पीछा करने लगे। वह जहाँ जाता वहीं दीन- दुखियों की भीड़ लग जाती। माताएँ अपने रोगी बच्चों को उसकी छाँह में ले जाती और नीरोग हँसमुख बच्चों को गोद में उठा कर लौटती। लेकिन काशीनाथ अपनी छाया का प्रभाव स्वयं नहीं जानता था। उसे नहीं मालूम था कि वह अनजाने कितने लोगों की भलाई कर रहा है। यह सब देवताओं के वरदान का प्रभाव था। इस तरह काशीनाथ से उपदेश पाए बिना ही लोग उसके भक्त बन गए और अपना चाल-चलन सुधारने लगे।



एक समय एक गाँव में गुणीराम नाम का एक बनिया रहता था। उसे अपनी बीवी और बच्चों के साथ काशी जी की यात्रा कर आने की इच्छा हुई। उस समय उसके पास दो सौ अशर्फियाँ थीं। उसने सोचा कि पैसा पास रहने पर खर्च हो जाता है। इसलिए सौ अशर्फियाँ पास रख कर बाकी सौं कहीं छिपा देनी चाहिए। यह सोच कर उसने अपने मित्र लाला धनीराम के पास जाकर सलाह माँगी कि अशर्फियाँ कहाँ छिपाई जाएँ।

तब धनीराम ने कहा-"गाँव के बाहर भुतहा बरगद का पेड़ है। अशर्फियों को उसके नीचे गाड़ दो। वही सबसे अच्छी जगह है। क्योंकि भूतों के डर से कोई वहाँ नहीं जाता।"

जब रात हो गई और सब लोग सो गए तो गुणीराम अशर्फियाँ छिपाने के लिए भुतहा बरगद की ओर चला। उसने सोचा कि अधेरे में अकेले जाना ठीक नहीं। इसलिए धनीराम को भी साथ ले लिया। बरगद के नीचे एक गज गहरा खोद कर अशर्फियों को गाड़ दिया और दोनों अपने अपने घर लौट गए।

दूसरे दिन गुणीराम सपरिवार तीर्थ-यात्रा करने निकल पड़ा। गाँव के बाहर जाते ही वह अशर्फियों की बात भूल गया।

लेकिन जब उसका मित्र धनीराम पिछली रात घर लौटा तो उसकी पत्नी ने पूछा था-"अजी! इतनी रात को तुम कहाँ गए थे !"

धनीराम ने सच्ची बात बता दी। अशर्फियों की बात सुनते ही धनीराम की पत्नी की नीयत बिगड़ गई। वह अपने पति को तङ्ग करने लगी कि-" जाओ। वे अशर्फियाँ खोद कर ले आओ।"

कृष्णचन्द्र

धनीराम पहले तो पत्नी पर बिगड़ने लगा-"चुड़ैल कहीं की। क्या तू चाहती है कि मे अपने मित्र के साथ विश्वासघात करू!" लेकिन उसकी स्त्री ने धमकाया कि अगर यह वहाँ से अशर्फियाँ नहीं लाया तो वह कुएँ या तालाब में डूब जाएगी। इस पर उससे रहा न गया। उसने घबरा कर चुप्पी साध ली। उसी वक्त उसने बरगद के पास जाकर अशर्फियाँ निकाल ली और लाकर अपनी पत्नी को दे दी। उन अशर्फियों से ललाइन ने गहने बनवा लिए और उन्हें पहन कर सारे गाँव में घूम घूम कर दिखाने लगी। नतीजा यह हुआ कि गाँव की सभी औरतें उससे जलने लगीं।

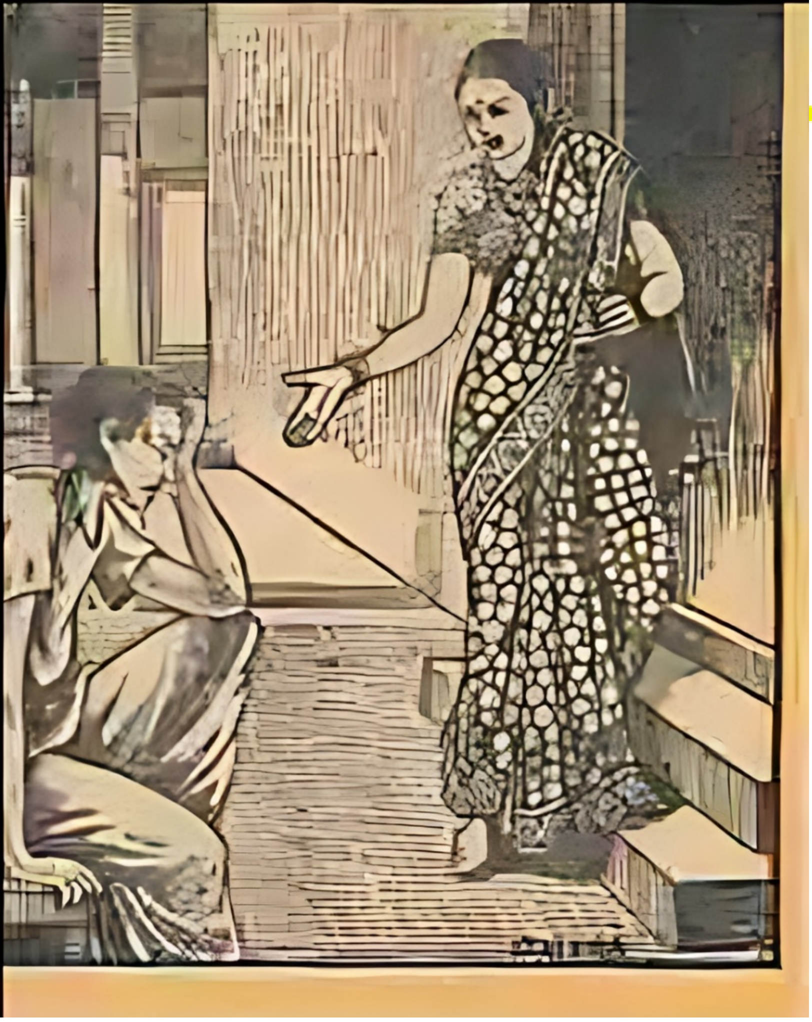
गुणीराम को सपरिवार काशी जाकर लौट आने में बहुत दिन लग गए। जब तक उसने अपने गाँव में पैर रखे तो उसके पास का पैसा सब चुक गया था। इसलिए वह उसी रात बरगद के नीचे गया और खोद कर देखा। लेकिन वहाँ क्या था ? कुछ भी नहीं !

उसने सोचा-"धनीराम ने मुझे कैसा धोखा दिया ? पीठ फेरते ही उसने मेरी अशर्फियाँ चुरा ली।" माथा ठोक कर वह घर लौट गया और पत्नी से जाकर सारी कहानी कह



सुनाई। उसकी पत्नी बहुत समझदार थी। उसने पति को ढाँढस बँधा कर कहा-"अब सोच करने से कोई फायदा नहीं ! आप जाकर धनीराम से पूछिएगा तो वह साफ इनकार कर आएगा। आप किसी से शिकायत भी नहीं कर सकते। क्योंकि सबूत तो कुछ है नहीं ! फिर भी मुझे एक सुन्दर उपाय सुझा है। अगर आप चाहें तो वैसा करके देखिए !" यह कह कर उसने पति के कान में एक बात कह दी।

दूसरे दिन गुणीराम सवेरे उठ कर धनीराम के घर गया। उस का मुँह खिला हुआ



था। उसे देख कर कोई नहीं सोच सकता था कि उसकी कोई चीजें खो गई है। धनीराम ने अपने मित्र को देख कर सोचा-"अशर्फियों की बात अभी इसे मालूम नहीं हुई !

गुणीराम ने बातचीत शुरू कर दी-"न जाने में कैसी अच्छी साइत में यात्रा करने चला था। सब लोग यात्रा में रुपया खर्च कर आते हैं। लेकिन मैं काशी जी में व्यापार कर के रुपए कमा लाया। आज सौ अशर्फियों की जगह मेरे पास एक हजार हैं। तुरन्त धनीराम और उसकी पत्नी गुणीराम के सौभाग्य पर जलने लगे। लेकिन बाहर से उन्होंने कहा-"तुम्हारी नसीब अच्छी है।"

तब गुणीराम ने फिर कहा-"मेरी पत्नी कहती है-चलो, रामेश्वर की भी यात्रा कर आएँ। काशी के विश्वनाथ ने हजार अशर्फियाँ दे ही दी है। देखे, अब रामेश्वरजी कितना देते है। मुझे भी उसकी बात जँच गई है। तीन-चार दिनों में हम फिर रामेश्वर चल देंगे।"

"जरूर जाना। रामेश्वर तो सबसे बड़ा तीर्थ है।" धनीराम ने कहा।

तुरन्त गुणीराम ने धीमे स्वर में कहा-"भई, रामेश्वर जाने के पहले हमें एक बार बरगद के पास जाना होगा। क्योंकि मेरी इच्छा है कि काशी से जो हजार अशर्फियाँ लाया हूँ, वे भी वहीं छिपा दूँ !" बरगद की बात सुनते ही धनीराम का मुँह सफेद पड़ गया। पर गुणीराम ने यह देख कर भी कुछ नहीं कहा और चुपचाप घर लौट गया।

गुणीराम के जाने के बाद धनीराम के मन में खलबली मच गई। बरगद के नीचे खोदने के बाद गुणीराम पूछेगा कि अशर्फियाँ कहाँ गई तब वह क्या जवाब देगा ! वह मन ही मन बहुत पछताने लगा। लेकिन उसकी स्त्री को कुछ भी पछतावा न था । उलटे उसका सारा ध्यान तो उन हजार अशर्फियों पर लगा हुआ था जो गुणीराम काशी से

कमा लाया था। वह सोचने लगी कि उन हजार अशर्फियों से वह और कौन कौन से गहने बनवा सकती है ? सोने की हँसुली ? तीन लड़ बाला हार ! सोने के ठोस कड़े ! वह सोचने लगी कि ये सब पहन कर जब यह गाँव की औरतों के पास जाएगी तो वे कितना कुढ़ेगी। अब वह बार-बार पति से पहने लगी- अजी ! गुणीराम ने आपको बरगद के पास आने को कहा है।"



"क्यों ? अब क्या सूना है तुझे ! मैं तो बरगद के पास नहीं जाने का। जब वह पूछेगा कि अशर्फियाँ कहाँ गई तो मैं क्या जवाब दूँगा ?" धनीराम ने कहा।

'बस, इतने ही में आपकी अक्ल घास चरने चली गई? तो सुन लीजिए। आप रातों-रात जाकर सौ अशर्फियाँ बरगद के नीचे उसी जगह गाढ़ आइए। सवेरे बेधड़क गुणीराम के साथ यहाँ जाइए और हजार अशर्फियाँ भी वहीं गडवा आइए। अपनी सौ अशर्फियाँ सुरक्षित देख कर गुणीराम को कोई शक न होगा। यह निश्चिन्त मन से हजार अशर्फियाँ भी वहीं गाड़ देगा और रामेश्वर चला जायगा। तब हम जाएँगे और सौ अशर्फियाँ खोद कर ले आएँगे।" धनीराम की स्त्री यह कह कर खिलखिला उठी।

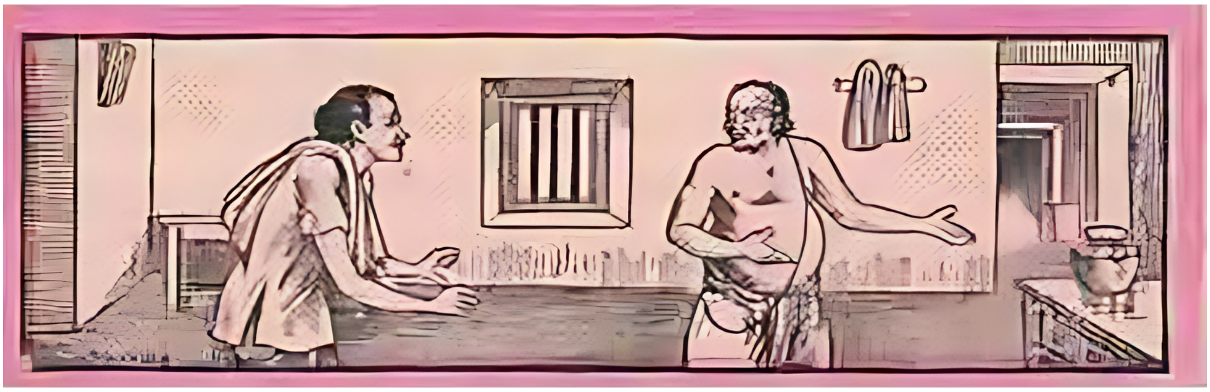
"ठीक है। पर अभी सौ अशर्फियाँ लाएँ कहाँ से!" धनीराम ने पूछा।

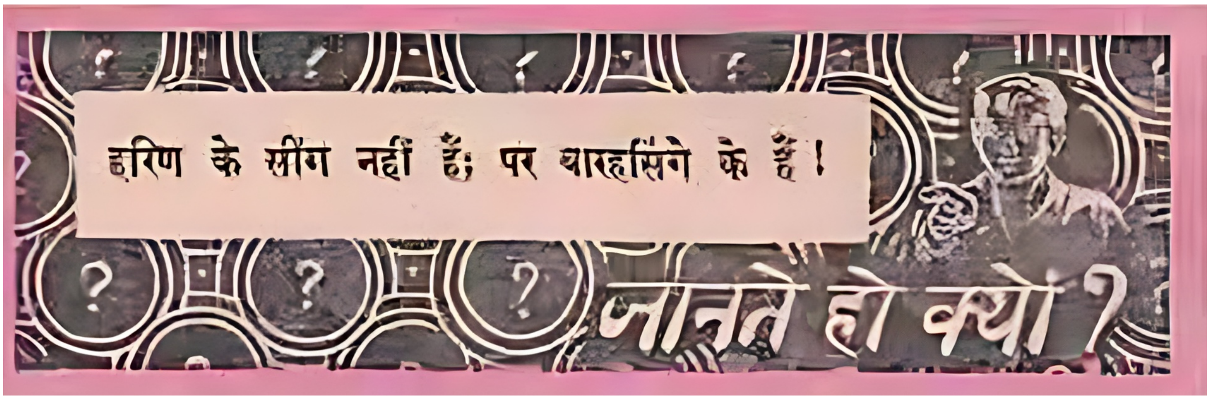
"और कहाँ से लाएँगे ! जाइए, कर्ज ले आइए। मेरे अपने गहने, गुणीराम की अशर्फियों से बनाए हुए गहने, सब ले जाइए और किसी के पास गिरवी रख कर सौ अशर्फियाँ ले आइए। ज्यों ही गुणीराम रामेश्वर की यात्रा करेगा, ग्यारह सौ अशर्फियाँ हमारे हाथ आ जाएँगी और हम गिरवी से गहने छुड़ा लेंगे। धनीराम की बीवी ने कहा। धनीराम की खुशी का ठिकाना न रहा। उसने जरा भी देर न लगाई। झटपट उठा

कर घर के सब गहने पोटली बाँध कर एक महाजन के पास गया और गिरवी रख कर सौ अशर्फियाँ ले आया। फिर वह रातों रात अशर्फियाँ बरगद के नीचे उसी जगह गाड़ आया। सबेरा होते ही वह गुणीराम के घर गया और बोला-"भाई चल कर अपनी धरोहर देख लो।"

"अच्छा, तुम तैयार रहना। मैं आज रात ठीक ग्यारह बजे तुम्हारे घर आऊँगा।" गुणीराम ने मामूली ढङ्ग से कहा। उस रात को धनीराम बड़ी बेचैनी के साथ गुणीराम की राह देख रहा था। ग्यारह बज गए; आखिर बारह भी बज गए। लेकिन गुणीराम का कहीं पता नहीं। तब धनीराम घबरा गया और अपने मित्र के घर जाकर उसे जगाया। "क्या बात क्या है ! तुम आए नहीं क्यों ?" उसने पूछा।

"अरे मैं तो भूल ही गया था ! माफ करना नाई ! तुम सोए नहीं अभी तक ? मैंने सोचा कि सबेरे आकर तुम्हें बता दूँगा। बात यह है कि हमने रामेश्वर जाने का विचार छोड़ दिया। शाम को मैं वैसे ही टहलते टहलते बरगद की तरफ चला गया था। बरगद को देखते ही अशर्फियों की बात याद आ गई। मैने सोचा-जब यहाँ तक आ ही गया हूँ तो अशर्फियाँ क्यों न लेता जाऊँ ? बस, अशर्फियाँ निकाल कर घर लेता आया। अशर्फियाँ ज्यों-की-त्यों पड़ी थी। हाँ, रात ज्यादा हो गई। अब तुम भी जाकर सो जाओ न !" यह कह कर गुणीराम निश्चिन्त सो गया। बेचारा धनीराम तो मन-ही-मन कट गया। कलेजे पर छुरियाँ चल गई। उसकी स्त्री ने जब यह सुना तो सिर पीट कर रोने-धोने लग गई। पराए धन पर हाथ बढ़ाने से अपना भी गँवा बैठे। किसी से कुछ शिकायत भी नहीं कर सकते थे। बस, मन मसोस कर चुप हो रहे। ठीक ही कहा है किसीने "जैसी करनी वैसी भरनी।"





सुनो-सूरज और चाँद भाई-भाई हैं। लेकिन सूरज आग की तरह जलता है और चाँद अमृत जैसा ठण्डा है। अचरज होगा सुन कर--सूरज की पत्नी छाया जितनी ठण्डी है, चाँद की पत्नी रोहिणी उतनी ही गरम। दोनों भाई भगवान की दो आँखें हैं और दिन-रात तीनों लोकों के पाप-पुण्य देखा करते हैं। दिन में सुरज की जिम्मेदारी है और रात को चाँद आ जाता है। इस तरह दोनों भाई अपना काम दो हिस्सों में बाँट लेते है और दोनों बारह-बारह घण्टों तक चल कर अपने हिम्से का काम पूरा करते हैं। सूरज के पास सात घोड़ों वाला रथ है। उस पर बैठ कर वह बड़े आराम से ठीक समय पर आ जाता है। लेकिन चाद को पैदल चलना पड़ता है। इस कारण हमेशा उसे बिलम्ब हो जाता है। कभी-कभी तो रास्ते में ही सबेरा हो जाता है। महीने में शायद एकाध दिन ही वह समय पर मञ्जिल तक पहुँच पाता है। अपने लेट-लतीफ दुलारे देवर का यह हाल देख कर छाया देवी उसकी खूब हँसी उड़ाती है। यह सब देख कर रोहिणी का पारा और भी चढ़ जाता है।

हाँ, तो एक दिन रोहिणी सरस्वती देवी की शरण में गई और प्रार्थना करके उनसे यह वर माँगा -"माँ ! मेरे पति देव को ऐसी सवारी दीजिए जो एक दम नई हो, सबसे सुन्दर हो और सबसे तेज हो।"

"एवमस्तु" कह कर सरस्वती देवी अन्तर्धान हो गई।

देवी सरस्वती घर आकर झट विरंचि बाबा के दफ्तर में गई। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि चारों ओर आधी गढ़ी, या बिगड़ी हुई चीजें पड़ी हुई हैं। उनमें एक चीज़ पर उन का मन गड़ गया। उसका रङ्ग सुनहला था। उस पर सुन्दर मणियों के से धब्बे थे। मुँह भी बहुत मनोहर था। आँखे लजीली और

बड़ी-बड़ी थीं। टाँगे पतली-पतली, देखने में बड़ी मली लगती थीं। देवी सरस्वती ने उस चीज में जान डाल दी और उसे ले जाकर रोहिणी को दे दिया।

रोहिणी ने उसे अनेक तरह से सजा कर अपने पति की भेंट कर दी। चाँद ने उसका नाम 'मृग' रखा और उसे अपनी सवारी बना ली। इस सवारी की कृपा से अब चाँद का सफर बहुत आसानी से कटने लगा। संसार को भी यह देख कर बहुत आनन्द होने लगा। लेकिन छाया देवी की आँखें ढाह से जलने लगी। क्योंकि यह विचित्र मृग उस के पति के सात घोड़ों से भी तेज दौड़ता था। यह उसकी बर्दाश्त के बाहर था। अब वह अपने पति को हरदम तङ्ग करने लगी "जाओ! तुम भी वैसी एक सवारी कहीं से ले आओ। आखिर सूरज ने भी ब्रह्मा के पास जाकर कहा-"आप मुझे भी एसी ही सवारी दीजिए जैसी कि आपने चाँद को दी।"

पहले तो यह बात सुनते ही ब्रह्मा जी हक्के-बक्के से रह गए। क्योंकि उन्होंने चाँद को कभी कोई सवारी नहीं दी थी। लेकिन पीछे उन्होंने अपनी दिव्य-दृष्टि से सारा हाल जान लिया और गुस्से में आकर सरस्वती को शाप दे दिया कि "जाओ, आज से जो तुम्हारा आश्रय लेगा, वह आजीवन दरिद्र बना रहेगा।" फिर ब्रह्मा ने ठीक मृग की तरह का एक जीव बनाया और उसे सुन्दर सीङ्गों से सजा दिया। उन्होंने सोचा कि उस के बदन पर धब्बे अच्छे नहीं लगते। इसलिए उन्होंने उनको पोछ डाला। उन्होंने इस नए जीव को और भी तेज बनाया। इसी कारण से हरिण के सीङ्ग नहीं है और बारह-सिङ्गे के हैं। हरिण देवी सरस्वती ने बनाया था और बारहसिङ्गा ब्रम्हा ने।



